समाज विकासमाला

कितनी ज़मीन ?

सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन

समाज-विकास-माला : १२

कितनी ज़मीन ?

टाल्स्टाय की एक रोचक और शिक्षाप्रद कहानी

अनुवादक
जैनेन्द्रकुमार

सम्पादक
यशपाल जैन

१९५६

सस्ता साहित्य मंडल-प्रकाशन

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय
मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल
नई दिल्ली ।

तीसरी बार : १९५६
मूल्य
छः आना

मुद्रक
सुरेन्द्र प्रिंटर्स लि०
दिल्ली ।

समाज-विकास-माला

हमारे देश के सामने आज सबसे बड़ी समस्या करोड़ों आदमियों की शिक्षा की है। इस दिशा में सरकार की ओर से यदि कुछ कोशिश हो रही है तो वही काफी नहीं है। यह बड़ा काम सबकी सहायता के बिना पार नहीं पड़ सकेगा। बालकों तथा प्रौढ़ों की पढ़ाई की तरफ जबसे ध्यान गया है, ऐसी किताबों की मांग बढ़ गई है, जो बहुत ही आसान हों, जिनके विषय रोचक हों, जिनकी भाषा मुहावरेदार और बोलचाल की हो और जो मोटे टाइप में बढ़िया छपी हों।

इस पुस्तक-माला को हमने इन्हीं बातों को सामने रखकर चालू किया है। इसमें कई पुस्तकें निकल चुकी हैं। इन सबकी भाषा बड़ी आसान है। विषयों का चुनाव सावधानी से किया गया है। छपाई-सफाई के बारे में भी विशेष ध्यान रक्खा गया है। हर किताब में चित्र भी देने की कोशिश की है।

यदि पुस्तकों की भाषा, शैली, विषय और छपाई में पाठकों को सुधार की गुंजाइश मालूम हो तो उसकी सूचना निस्संकोच देने की कृपा करें।

दूसरा संस्करण

बड़े हर्ष की बात है कि इस पुस्तक का दूसरा संस्करण इतनी जल्दी प्रकाशित हो रहा है। इस माला की सभी पुस्तकें पाठकों को पसंद आ रही हैं, इससे हमें बड़ा आनन्द होता है। हमें विश्वास है कि इन सामयिक और उपयोगी पुस्तकों को पाठक चाव से पढ़ेंगे और इनके प्रचार में हाथ बटायेंगे।

—मंत्री

पाठकों से

रूस देश के टाल्स्टाय दुनिया के बहुत बड़े लेखकों में से हुए हैं। उन्होंने जो कुछ लिखा है, ऊँचे दरजे का है और पाठकों के लिए बड़े काम का है।

इस कहानी में उन्होंने बताया है कि आदमी जिन्दगी में कितनी भाग-दौड़ करता है, चारों ओर भटकता है; लेकिन अंत में उसके साथ कुछ भी नहीं जाता, सबकुछ यहीं छूट जाता है। यह कहानी गांधी-जी को इतनी अच्छी लगी थी कि उन्होंने इसका गुजराती में अनुवाद करके छपवाया था और हजारों पाठकों को उससे लाभ पहुँचा था।

आप इस कहानी को मन लगाकर पढ़ें और समझें कि इसमें कितनी गहरी सचाई की बात कही गई है। अगर आपको पसंद आवे तो दूसरे पाठकों को भी इसे पढ़वायें।

—सम्पादक

कितनी ज़मीन ?

: १ :

दो बहनें थीं। बड़ी का कस्बे में एक सौदागर से विवाह हुआ था। छोटी देहात में किसान के घर ब्याही थी।

बड़ी का अपनी छोटी बहन के यहां आना हुआ। निबटकर दोनों जनी बैठीं तो बातों का सूत चल पड़ा। बड़ी अपने शहर के जीवन की तारीफ करने लगी—"देखो, कैसे आराम से हम रहते हैं। फैंसी कपड़े और ठाठ के सामान! स्वाद-स्वाद की खाने-पीने की चीजें, और फिर तमाशे-थियेटर, बाग-बगीचे!"

छोटी बहन को बात लग गई। अपनी बारी पर उसने सौदागर की जिंदगी को हेच बताया और किसान का पक्ष लिया। कहा—"मैं तो अपनी जिंदगी का तुम्हारे साथ अदला-बदला कभी न करूँ। हम सीधे-सादे और रूखे-से रहते हैं तो क्या, चिंता-फिकर से तो छूटे हैं। तुम लोग सजी-धजी रहती हो, तुम्हारे यहां आमदनी बहुत है। लेकिन एक रोज वह सब हवा भी हो सकता है, जीजी। कहावत है ही—हानि-लाभ दोई जुड़वां भाई। अक्सर होता है कि आज जो अमीर है कल वही

टुकड़े को मोहताज है। पर हमारे गाँव के जीवन में यह जोखिम नहीं है। किसानी जिंदगी फूली और चिकनी नहीं दीखती तो क्या, उमर लंबी होती है और मेहनत से तन्दुरुस्ती भी बनी रहती है। हम मालदार न कहलायेंगे; लेकिन हमारे पास खाने की कमी भी कभी न होगी।"

बड़ी बहन ने ताने से कहा, "बस-बस, पेट तो बैल और कुत्ते का भी भरता है। पर वह भी कोई जिंदगी है ? तुम्हें जीवन के आराम, अदब और आनन्द का क्या पता है ? तुम्हारा मर्द जितनी चाहे मेहनत करे, जिस हालत में तुम जीते हो, उसी हालत में मरोगे, वही चारों तरफ गोबर, भुस, मिट्टी ! और यही तुम्हारे बच्चों की किस्मत में बदा है।"

छोटी ने कहा, "तो इसमें क्या हुआ ! हां, हमारा काम चिकना-चुपड़ा नहीं है; लेकिन हमें किसीके आगे झुकने की भी जरूरत नहीं है। शहर में तुम हजार लालच से घिरी रहती हो। आज नहीं तो कल की क्या खबर है। कल तुम्हारे आदमी को पाप का लोभ—जुआ, शराब और दूसरी बुराइयां फँसा सकते हैं, तब घड़ी भर में सब बरबाद हो जायगा क्या ऐसी बातें अक्सर होती नहीं हैं ?"

घर का मालिक दीना ओसारे में पड़ा औरतों की

यह बात सुन रहा था। उसने सोचा कि बात तो खरी है। बचपन से मां धरती की सेवा में हम इतने लगे रहते हैं कि कोई व्यर्थ की बात हमारे मन में घर नहीं कर पाती है। बस, है तो मुश्किल एक है। वह यह कि हमारे पास जमीन काफी नहीं है। जमीन खूब हो तो मुझे किसी की परवाह न रहे, चाहे शैतान ही क्यों न हो।

औरतों में फिर इधर की, उधर की, घर की और परिवार की सब बातचीत हुई। आखिर अलग होकर वे आराम करने लगीं।

लेकिन वहीं कोने में शैतान दुबका बैठा था। उसने सबकुछ सुना। वह खुश था कि किसान की बीवी ने गांव की बड़ाई करके अपने आदमी को डींग पर चढ़ा दिया। देखो न, कहता था कि जमीन खूब हो तो फिर चाहे शैतान भी आ जाय तो परवाह नहीं।

शैतान ने मन में कहा कि अच्छा हजरत, यही फैसला सही। मैं तुमको काफी जमीन दूंगा और देखना है कि उसीसे तुम मेरे चंगुल में होते हो कि नहीं।

: २ :

गांव के पास ही जमींदारी की मालकिन की कोठी थी। कोई तीन सौ एकड़ उनकी जमीन थी। उनके अपने आसामियों के साथ बड़े अच्छे सम्बन्ध रहते आये थे; लेकिन उन्होंने एक कारिन्दा रक्खा, जो पहले फौज

में रहा था। उसने आकर लोगों पर जुरमाने ठोकने शुरू कर दिये।

दीना का यह हाल था कि वह बहुतेरा करता, पर कभी तो उनका बैल जमींदारी की चरी में पहुँच जाता, कभी गाय बगिया में चरती पाई जाती। और नहीं तो उसकी रसाई हुई घास में बछिया-बछड़ा ही जा मुंह मारते। हर बार दीना को जुर्माना उठाना पड़ता। जुर्माना तो वह देता, पर बेमन। वह कुन-मुनाता और चिढ़ा हुआ-सा घर पहुँचता और अपनी सारी चिढ़ घर में उतारता। पूरे मौसम कारिंदे की वजह से उसे ऐसा त्रास भुगतना पड़ा। जाड़ों का पतझड़ आने पर वह खुश होता कि चलो, अब जानवरों को अंदर बंद रखना पड़ेगा। ढोर तब बाहर चर सकते नहीं थे और उन्हें घर में रखकर खिलाना पड़ता था। पर चलो, दीना को जुर्माने की चिंता से तो मुक्ति मिल जाती थी।

अगले जाड़ों में गांव में खबर हुई कि मालकिन अपनी जमीन बेच रही है और मुंशी इकराम्अली से सौदे की बातचीत चल रही है। किसान सुनकर चौकन्ने हुए। उन्होंने सोचा कि मुंशीजी की जमीन होगी तो वह जमींदार के कारिन्दे से भी ज्यादा सख्ती करेंगे और जुर्माने चढ़ावेंगे और हमारी तो गुजर-बसर

इसी जमीन पर है।

यह सोचकर किसान मालकिन के पास गये। कहा कि मुंशीजी को जमीन न दीजिए । हम उससे बढ़ती कीमत पर लेने को तैयार हैं। मालकिन राजी हो गई। तब किसानों ने कोशिश की कि मिलकर गांव-पंचायत की तरफ से वह सब जमीन ली जा सके ताकि वह सभीकी बनी रहे। दो बार इसपर विचार करने को पंचायत जुड़ी, पर फैसला न हुआ। असल में शैतान की सब करतूत थी। उसने उनके बीच फूट डाल दी थी। बस, तब वे मिलकर किसी एक मत पर आ ही नहीं सके। तय हुआ कि अलग-अलग करके ही वह जमीन ले ली जाय। हर कोई अपने बित्ते के हिसाब से ले। मालकिन पहले की तरह इस बात पर भी राजी हो गई।

इतने में दीना को मालूम हुआ कि एक पड़ोसी इकट्ठी पचास एकड़ जमीन ले रहा है और जमींदारिन राजी हो गई है कि आधा रुपया अभी नकद ले लें, बाकी साल भर बाद चुकता हो जायगा।

दीना ने अपनी स्त्री से कहा कि और जने खरीद रहे हैं। हमें भी बीस या इतने एकड़ जमीन लेनी चाहिए। जीना वैसे भार हो रहा है और वह कारिंदा जुर्माने-पर-जुर्माने करके हमें बरबाद ही कर देगा।

उन दोनों ने मिलकर विचार किया कि किस तरकीब से जमीन खरीदी जाय। सौ कलदार तो उनके पास बचे हुए रखे थे। एक उन्होंने उमर पर आया अपना बछड़ा बेच डाला। कुछ माल बंधक रक्खा। अपने बड़े बेटे को मजदूरी पर चढ़ाकर उसकी नौकरी के मद्दे कुछ रुपया पेशगी ले लिया। बाकी बचा अपनी स्त्री के भाई से उधार ले लिया। इस तरह कोई आधी रकम उन्होंने इकट्ठी करली।

इतना करके दीना ने एक चालीस एकड़ का जमीन का टुकड़ा पसंद किया जिसमें कुछ हिस्से में दरख्त भी खड़े थे। मालकिन के पास उसका सौदा करने पहुँचा। सौदा पट गया और वहीं-के-वहीं नकद उसने साई दे दी। फिर कस्बे में जाकर लिखा-पढ़ी पक्की करली।

अब दीना के पास अपनी निजी जमीन थी। उसने बीज खरीदा और इसी अपनी जमीन पर बोया, इस तरह वह अब खुद जमींदार हो गया। अपनी जमीन जोतता और बोता। अपनी जमीन पर चारा उगाता, फल के पेड़ लगाता। ईंधन भी वहीं हो जाता था और उसके ढोरों को चराई के लिए बाहर नहीं जाना पड़ता था। अब वह अपने खेतों की तरफ जाता, या लहराती फसल को निहारता, या हरी घास की चरागाहों पर नजर फैलाता तो उसका मन हर्ष से भर जाता था। यह बिछी घास, उगते पौधे और फलते फूल ऐसे मालूम होते थे

कि और सबसे बढ़कर। पहले जब वह वहां से गुजरता तो यह जमीन बिलकुल ऐसी मालूम होती थी जैसी और जमीन। लेकिन अब बात ही दूसरी होगई थी।

: ३ :

इस तरह दीना काफी खुशहाल था। उसके संतोष में कोई कमी न रहती, अगर बस पड़ोसियों की तरफ से उसे पूरा चैन मिल सकता। कभी-कभी उसके खेतों पर पड़ोसियों के मवेशी आ चरते। दीना ने बहुत विनय के साथ समझाया, लेकिन कुछ फर्क नहीं हुआ। उसके बाद, और-तो-और, घोसी-छोकरे गांव की गायों को दिन-दहाड़े उसकी जमीन में छोड़ देने लगे। रात को बैल खेतों का नुकसान करते। दीना ने उनको बार-बार निकलवाया और बार-बार उसने उनके मालिकों को माफ किया। एक अर्से तक वह धीरज रक्खे रहा और किसीके खिलाफ कार्रवाई नहीं की। लेकिन कबतक ? आखिर उसका धीरज टूट गया और उसने अदालत में दरख्वास्त दी। मन में जानता तो था कि मुसीबत की वजह असली यह है कि और लोगों के पास जमीन की कमी है, जान-बूझकर दीना को सताने की मंशा किसीकी नहीं है। लेकिन उसने सोचा कि इस तरह में नरमी दिखाता जाऊंगा तो वे लोग शह पाते जायंगे और मेरे पास जितना है सब बरबाद कर

दगे। नहीं, उनको एक सबक सिखाना चाहिए।

सो उसने ठान ली। एक सबक दिया, दूसरा दिया। नतीजा कि दो-तीन किसानों पर अदालत से जुर्माना हो गया। इसपर तो पास-पड़ोस के लोग दीना से कीना रखने लगे। अब कभी-कभी जान-बूझकर भी तंग करने के लिए अपने मवेशी उसके खेतों में छोड़ देते। एक आदमी गया और उसे जरूरत अगर घर में ईंधन की थी तो उसने रात में जाकर सात पूरे शीशम के



सवेरे घूमते देखा कि पेड़ कटे पड़े हैं

दरख्त काट गिराये। दीना ने सवेरे घूमते हुए देखा कि पेड़ कटे हुए पड़े हैं। वे धरती से सटे हैं और उनकी

जगह खड़े ठूंठ मानो दीना को चिढ़ा रहे हैं। देखकर उसको तैश आ गया।

उसने सोचा कि अगर दुष्ट ने एक यहां का तो दूसरा दूर का पेड़ काटा होता तो भी गनीमत थी। लेकिन कम्बख्त ने आस-पास के सब पेड़ काटकर बगिया को वीरान कर दिया। पता लगे तो खबर लिये बिना न छोड़ूँ। उसने जानने के लिए सिर खुजलाया कि यह करतूत किसकी हो सकती है। आखिर तय किया कि हो-न-हो यह धुन्नू होगा। और कोई ऐसा नहीं कर सकता। यह सोच धुन्नू की तरफ गया कि शायद कुछ सूत पकड़ाई मिले, लेकिन वहां कुछ चोरी का सबूत मिला नहीं और आपस में कहा-सुनी और तेजा-तेजी के सिवा कुछ नतीजा न निकला। तो भी उसके मन में पक्का हो गया कि धुन्नू ने ही यह किया है और जाकर रपट लिखा दी। धुन्नू की पेशी हुई, मामला चला। एक अदालत से दूसरी अदालत हुई। आखिर में धुन्नू बरी हो गया, क्योंकि कोई सबूत और गवाह ही नहीं थे। दीना इस बात पर और भी झल्ला उठा और अपना गुस्सा मजिस्ट्रेट पर उतारने लगा।

इस तरह दीना का अपने पड़ोसियों और अफसरों से मनमुटाव होने लगा, यहांतक कि उसके घर में भी आग लगाने की बातें सुनी जाने लगीं। अगर्चे दीना

के पास अब जमीन ज्यादा थी और जमींदारों में गिनती थी, पर गांव में और पंचों में पहला-सा उसका मान न रह गया था।

इसी बीच अफवाह उड़ी कि कुछ लोग गांव छोड़-छोड़कर कहीं जा रहे हैं।

दीना ने सोचा कि मुझे तो अपनी जमीन छोड़ने की जरूरत है ही नहीं। लेकिन और कुछ लोग अगर गांव छोड़ेंगे तो चलो, गांव में भीड़ ही कम होगी। मैं उनकी जमीन खुद ले लूंगा। तब ज्यादा ठीक रहेगा। अब तो कुछ तंगी मालूम होती है।

एक दिन दीना घर के ओसारे में बैठा हुआ था कि एक परदेशी-सा किसान उधर से गुजरता हुआ उस के घर उतरा। वह वहां रात भर ठहरा और खाना भी वहीं खाया। दीना ने उससे बातचीत की कि भाई कहां से आ रहे हो? उसने कहा कि दरिया सतलज के पार से आ रहा हूँ। वहां बहुत काम है। फिर एक में से दूसरी बात निकली और आदमी ने बताया कि उस तरफ नई बस्ती बस रही है। उसके अपने गांव के कई और लोग वहां पहुँचे हैं। वे सोसायटी में शामिल हो गये हैं और हरेक को बीस एकड़ जमीन मुफ्त मिली है। जमीन ऐसी उम्दा है कि उसपर गेहूँ की पहली फसल जो हुई तो आदमी से ऊँची उसको

बालें गईं और इतनी घनी कि दरांत के एक काट में एक पूला बन जाय। एक आदमी के पास खाने को दाने न थे। खाली हाथ वहाँ पहुँचा। अब उसके पास दो गायें, छः बैल और भरा खलियान अलग।

दीना के मन में भी अभिलाषा पैदा हुई। उसने सोचा कि मैं यहाँ तंग संकरी-सी जगह में पड़ा क्या कर रहा हूँ, जबकि दूसरी जगह मौका खुला पड़ा है। यहाँ की जमीन, घर-बार बेच-बाच कर नकदी बना वहीं क्यों न पहुँचूं और नये सिरे से शुरू करके देखूँ। यहाँ लोगों की गिचपिच हुई जाती है। उससे दिक्कत होती है और तरक्की रुकती है, लेकिन पहले खुद जाकर मालूम कर आना चाहिए कि क्या बात है। सो बरसात के बाद तैयारी करके वह चल दिया। पहले रेल में गया, फिर सैकड़ों मील बैलगाड़ी पर या पैदल सफर करता हुआ सतलज के पारवाली जगह पर पहुँचा। वहाँ देखा कि जो उस आदमी ने कहा था, सब सच है। सबके पास खूब जमीन है। हरेक को सरकार की तरफ से बीस-बीस एकड़ जमीन मिली हुई है, या जो चाहे खरीद सकता है। और खूबी यह कि कौड़ियों के मोल जितनी चाहे जमीन और भी ले लो।

सब जरूरी बातें मालूम करके दीना जाड़ों से पहले-पहल घर आ गया। आकर देश छोड़ने की बातें

सोचने लगा। नफे के साथ उसने जब जमीन बेच डाली। घर-मकान, मवेशी-डंगर सबकी नकदी बना ली और पंचायत से इस्तीफा दे दिया और सब कुनबे को साथ ले सतलज-पार के लिए रवाना हो गया।

: ४ :

दीना परिवार के साथ उस जगह पहुँच गया। जाते ही एक बड़े गांव की पंचायत में शामिल होने की अर्जी दी। पंचों की उसने खूब खातिर की और दावतें दीं। जमीन का पट्टा उसे सहज मिल गया। मिलीजुली जमीन में से उसके और उसके बालबच्चों के इस्तेमाल के लिए पांच हिस्से यानी सौ एकड़ जमीन उसको दे दी गई। वह सब इकट्ठी नहीं थी, टुकड़े कई जगह थे। अलावा इसके पंचायती चरागाह भी उसके लिए खुला कर दिया गया। दीना ने जरूरी इमारतें अपने लिए खड़ी कीं और मवेशी खरीद लिये। शाम-लात जमीन में से ही अब उसको इतना मिल गया था कि पहले से तिगुनी, और जमीन उपजाऊ थी। वह पहले से कई गुना खुशहाल हो गया। उसके पास चराई के लिए खुला मैदान-का-मैदान पड़ा था और जितने चाहे वह ढोर रख सकता था।

पहले तो वहां जमने और मकान-वकान बनवाने का उसे रस रहा। वह अपने से खुश था और उसे गर्व

मालूम होता था। पर जब वह इस खुशहाली का आदी हो गया तो उसे लगने लगा कि यहां भी जमीन काफी नहीं है; और होती तो अच्छा था। पहले साल उसने गेहूँ बुवाया और जमीन ने अच्छी फसल दी। वह फिर गेहूं ही बोते जाना चाहता था, पर उसके लिए और पड़ती जमीन काफी न थी। जो एक बार आ चुकती थी, वह उस तरफ एक साथ दोबारा गेहूं नहीं देती थी। एक या दो साल उससे गेहूं ले सकते थे, फिर जरूरी होता था कि धरती को आराम दिया जाय। बहुत लोग ऐसी जमीन चाहनेवाले थे, लेकिन सबके लिए आती कहाँ से ? इससे बदाबदी और खींचा-तानी होती थी। जो संपन्न थे, वे गेहूं उगाने के लिए जमीन चाहते थे। जो गरीब थे वे अपनी जमीन से जैसे-तैसे पैसा वसूल करना चाहते थे, ताकि टैक्स वगैरा अदा कर सकें। दीना और गेहूं बोना चाहता था। इसलिए एक साल के लिए किराये पर उसने और जमीन ले ली। खूब गेहूं बोया और फसल भी खूब हुई। लेकिन जमीन गाँव से दूर पड़ती थी और गल्ला मीलों दूर से गाड़ी में भर-भरकर लाना होता था। कुछ दिनों बाद दीना ने देखा कि कुछ बड़े-बड़े लोग अलग फार्म डाल कर रहते हैं और वे खूब पैसा कमा रहे हैं। उसने सोचा कि अगर मैं इकट्ठी

कायमी जमीन ले लूँ और वहीं घर बसाकर रहूं तो बात ही दूसरी हो जाय।

इस तरह इकट्ठी और कायमी जमीन खरीदने का सवाल बार-बार उसके मन में उठने लगा।

तीन साल इस तरह निकले। जमीन किराये पर लेता और गेहूं बोता। मौसम ठीक गये, काश्त अच्छी हुई और दीना के पास माल जमा होने लगा। वह इसी तरह संतोष से बढ़ता जा सकता था, लेकिन हर साल और लोगों से जमीन किराये पर लेने और उसके लिए कोशिश और सिरदर्दी करने के काम से वह थक गया था। जहां जमीन अच्छी होती, वहीं लेनेवाले दौड़ पड़ते। इससे बहुत चौकस-चौकन्ना और होशियार न रहा जाता तो जमीन मिलना असंभव था। यह एक परेशानी की बात थी। तिसपर तीसरे साल ऐसा हुआ कि दीना ने एक महाजन के साझे में कुछ काश्तकारों से एक जमीन किराये ली। जमीन गोड़ कर तैयार हो चुकी थी कि कुछ आपस में तनातनी हो गई और किसान लोग झगड़ा लेकर अदालत पहुँचे। अदालत से मामला बिगड़ गया और की-कराई मेहनत बेकार गई।

दीना ने सोचा कि अगर कहीं जमीन मेरी कायमी मिल्कियत की होती तो मैं आजाद होता और काहे

को यह पचड़ा बनता और बखेड़ा बढ़ता।

उस दिन से वह जमीन के लिए निगाह रखने लगा। आखिर एक किसान मिला जिसने एक हजार एकड़ जमीन खरीदी थी, लेकिन पीछे उसकी हालत संभली न रही। अब मुसीबत में पड़कर वह उसे सस्ती देने को तैयार था। दीना ने बात उससे चलाई और सौदा करना शुरू किया। आदमी मुसीबत में था, इससे दीना भाव-दर में कसा-कसी भी कर सका। आखिर कीमत एक हजार रुपये तय पाई। कुछ नकद दे दिया जाय, बाकी फिर। सौदा पक्का हो ही गया था कि एक सौदागर अपने घोड़े के दाने-पानी के लिए उसके घर के आगे ठहरा। उससे दीना को बातचीत जो हुई तो सौदागर ने कहा कि मैं नर्मदा नदी के उस पार से चला आ रहा हूँ। वहां १५०० एकड़ उम्दा जमीन कुल पांच सौ रुपये में मैंने खरीदी थी। सुनकर दीना ने उससे और सवाल पूछे। सौदागर ने कहा—

"बात यह है कि अफसर-चौधरी से मेल-मुलाकात करने का हुनर चाहिए। सौ से बढ़ती रुपये तो मैंने रेशमी कपड़े और गलीचे देने में खर्च किये होंगे। फिर शराब, फल-मेवों की डालियां, चाय-सेट वगैरा के उपहार अलग। नतीजा यह कि फी एकड़ मुझे जमीन आनों के भाव पड़ गई।" कहकर सौदागर ने अपने

दस्तावेज सब दीना के सामने कर दिये।

फिर कहा, "जमीन ऐन नदी के किनारे है और सारे-का-सारा किता इकट्ठा है। उपजाऊ इतना कि क्या पूछो।"

दीना ने इसपर उत्सुकतापूर्वक सौदागर से सवाल-पर-सवाल किये। उसने बताया—

"वहाँ इतनी जमीन है, इतनी, कि तुम महीनों चलो तो पूरी न हो। वहाँ के लोग ऐसे सीधे हैं जैसे



सौदागर ने कहा, "वहां जमीन मुफ्त के भाव ले सकते हो।"

भेड़। और जमीन समझो मुफ्त के भाव ले सकते हो।"

दीना ने सोचा, यह ठीक रहेगा। भला मैं अब हजार एकड़ के लिए हजार रुपये क्यों फसाऊँ?

अगर वहाँ जाकर इतना रुपया जमीन में लगाऊं तो यहां से कई गुनी ज्यादा जमीन मुझे पड़ जायगी।

: ५ :

दीना ने पूछताछ की कि उस जगह कैसे जाया जाय। सौदागर ने सब बतला दिया। वह चला गया तो दीना ने भी अपनी तैयारी शुरू की। बीवी को कहा कि घर देखना-भालना और खुद एक आदमी साथ ले यात्रा को निकल पड़ा। रास्ते में एक शहर में ठहर-कर, वहां से चाय के डब्बे और शराब और इसी तरह और उपहार की चीजें जो सौदागर ने बताई थीं, ले लीं। फिर दोनों बढ़ते गये, बढ़ते गये। चलते-चलते आखिर सातवें रोज वहां पहुँचे जहां से कोल लोगों की बस्ती शुरू होती थी। देखा तो यहां सौदागर ने बताई वही बात थी। दरिया के पास जमीन-ही-जमीन थी। सब खाली। ये लोग उससे काम न लेते थे। कपड़े या सिरकी के तम्बू में रहते, शिकार करते, मवेशी पालते और ऐसे ही मौज करते थे। न रोटी बनाना जानते थे न नाज उगाना सीखे थे। दूध का छाछ-मठा बनाते, पनीर बनाते, और उसकी एक तरह की शराब भी तैयार कर लेते थे। ये सब काम औरतें करतीं। मर्द खाने-पीने और फुर्सत के वक्त चैन की बंसी बजाने में रहते। वे लोग मजबूत और स्वस्थ थे

और काम-धाम के नाम बिना कुछ किये मगन रहते थे। अपने से बाहर उन्हें कुछ पता न था। पढ़ना-लिखना सीखे नहीं थे और हिन्दी तक नहीं जानते थे। पर थे भले-सीधे स्वभाव के। दीना को देखते ही वे अपने तम्बुओं से निकल आये और उसके चारों तरफ जमघट लगाकर खड़े हो गये। उनमें के एक दुभाषिये की मार्फत दीना ने बतलाया कि मैं जमीन की खातिर आया हूं। वे लोग बड़े खुश मालूम हुए। बड़ी आवभगत के साथ वे उसे अपने अच्छे-से-अच्छे डेरे में ले गये। वहां कालीन पर बिछे गद्दे पर बिठाया और खुद नीचे चारों ओर घिरकर बैठ गये। उसे पीने को चाय दी और दारू भी। उसकी मेहमानी में बढ़-चढ़कर दावत हुई। दीना ने भी गाड़ी में से अपने पास से भेंट की चीजें निकालीं और सबको थोड़ी-थोड़ी चाय बांटी। कोल लोग बड़े खुश थे। उन्होंने आपस में इस अजनबी की बाबत खूब चर्चा की। फिर दुभाषिये से कहा कि मेहमान को सब समझा दो।

दुभाषिये ने कहा कि ये लोग कहना चाहते हैं कि हम आपके आने से खुश हैं। हमारे यहां का कायदा है कि मेहमान की खातिर जो हमसे बन सके करें। आपकी कृपा के हम कृतज्ञ हैं। बतलाइए कि हमारे पास कौन-सी चीज है जो आपको सबसे पसंद है, ताकि हम

उसीसे आपकी खातिर कर सकें।

दीना ने जवाब दिया कि जिस चीज को देखकर मैं बहुत खुश हूँ, वह आपकी जमीन है। हमारे यहाँ जमीन की कमी है और वह उपजाऊ भी इतनी नहीं होती लेकिन यहां उसका कोई पार नहीं है और वह जमीन उपजाऊ भी खूब है। मैंने तो अपनी आँखों से यहाँ-जैसी धरती दूसरी देखी नहीं।

दुभाषिये ने दीना की बात अपने लोगों को समझा दी। कुछ देर वे आपस में सलाह करते रहे। दीना समझ नहीं सका कि वे क्या कह रहे हैं। लेकिन उसने देखा कि वे बहुत खुश मालूम होते हैं, बड़े हँस रहे हैं और जोर-जोर से बोल रहे हैं। अनंतर वे चुप हुए और दीना की तरफ देखने लगे।

फिर आपस में बात करने लगे। मालूम पड़ा कि जैसे उनमें कुछ दुविधा है। दीना ने पूछा कि उन लोगों में अब किस बात की अटक है। दुभाषिये ने बताया कि उनमें कुछ की राय है कि सरदार से जमीन देने के बारे में और पूछ लेना चाहिए, गैर-हाजिरी में कुछ कर डालना ठीक नहीं है। दूसरों का खयाल है कि इस बात में सरदार के लौटने की राह देखने की जरूरत नहीं है, जरा-सी तो बात है।

: ६ :

यह विवाद चल रहा था कि एक आदमी बड़ी-सी बालदार टोपी पहने वहाँ आ पहुँचा। सब चुप होकर उसके सम्मान में खड़े हो गये। दुभाषिये ने कहा कि यही हमारे सरदार हैं।

दीना ने फौरन अपने सामान में से एक बढ़िया लबादा निकाला और चाय का एक बड़ा डिब्बा; और ये चीजें सरदार को भेंट कीं। सरदार ने भेंट स्वीकार की और अपने आसन पर आ बैठा। बैठते ही कोल लोगों ने उससे कुछ कहना शुरू किया। सरदार कुछ देर सुनता रहा। फिर उसने उन्हें चुप रहने का इशारा किया। उसके बाद दीना की तरफ मुखातिब होकर हिन्दुस्तानी में कहा—

"इन भाइयों ने जो कहा, ठीक है। जो जमीन चाहे चुन लो। हमारे यहाँ उसका घाटा नहीं है।"

दीना ने सोचा कि मैं मनचाहे जितनी जमीन कैसे ले सकता हूँ। पक्का करने के लिए दस्तावेज वगैरा भी तो चाहिए, नहीं तो जैसे आज इन्होंने कह किया कि यह तुम्हारी है, पीछे वैसे ही उसे ले भी सकते हैं।

प्रकट में उसने कहा, "आपकी दया के लिए मैं कृतज्ञ हूँ। आपके पास बहुत धरती है और मुझे थोड़ी-सी चाहिए। लेकिन मुझे भरोसा होना चाहिए कि मेरा

अपना छोटा टुकड़ा कौन-सा है और यह कि वह मेरा ही है। क्या ऐसा नहीं हो सकता कि जमीन को नाप लिया जाय और उतना टुकड़ा फिर मेरे हवाले कर दिया जाय ? मरना-जीना ईश्वर के हाथ है और संसार में यही चक्कर चलता है। आप दयावान लोग तो मुझे यह देते हैं, पर हो सकता है कि पीछे आपकी औलाद उसीको वापस ले लेना चाहे तब——?"

सरदार ने कहा, "तुम्हारी बात ठीक है। जमीन तुम्हारे हवाले ही कर दी जायगी।"

दीना ने कहा——"सुना है, यहां एक सौदागर आया था। उसको भी आपने जमीन दी थी और उस बाबत कागज पक्का कर दिया था। वैसे ही मैं चाहता हूं कि कागज पक्का हो जाय।"

सरदार समझ गया।

बोला——"हां, जरूर। यह तो आसानी से हो सकता है। हमारे यहां एक मुंशी है, कस्बे में चलकर लिखा-पढ़ी पक्की कर ली जायगी और रजिस्ट्री हो जायगी।"

दीना ने पूछा, "कीमत की दर क्या होगी ?"

"हमारी दर तो एक ही है। एक दिन के एक हजार रुपये।"

दीना समझा नहीं। बोला, "दिन ! दिन का

हिसाब यह कैसा है ? यह बताइये कितने एकड़ ?"

सरदार ने कहा, "यह सब गिनना-गिनाना हमसे नहीं होता। हम तो दिन के हिसाब से बेचते हैं। जितनी जमीन एक दिन में पैदल चलकर तुम नाप डालो, वही तुम्हारी। और कीमत है ही दिनभर की एक हजार।"

दीना अचरज में पड़ गया। कहा, "एक दिन में तो बहुत-सी जमीन को घेरा जा सकता है।"

सरदार हँसा। बोला, "हां, क्यों नहीं। बस, वह सब तुम्हारी।" लेकिन एक शर्त है। अगर तुम उसी दिन उसी जगह न आ गये, जहां से चले थे, तो कीमत जब्त समझी जायगी।"

"लेकिन मुझे पता कैसे चलेगा कि मैं इस जगह से चला था।"

"क्यों, हम सब साथ चलेंगे और जहां तुम ठहरने को कहोगे ठहरे रहेंगे। उस जगह से शुरू करना और वहीं लौट आना। साथ फावड़ा ले लेना। जहां जरूरी समझा निशान लगा दिया। हर मोड़ पर एक गड्ढा किया और उसपर घास को जरा ऊँचा चिन दिया। पीछे फिर हम लोग चलेंगे और हल से इस निशान से उस निशान तक हदबन्दी खींच देंगे। अब दिन भर में जितना चाहो बड़े-से-बड़ा चक्कर तुम लगा

सकते हो। पर सूरज छिपने से पहले जहां से चले थे वहां आ पहुँचना। जितनी जमीन तुम इस तरह नाप लोगे वह तुम्हारी हो जायगी।"

दीना खुश हुआ। तय हुआ कि अगले सवेरे ही चलना शुरू कर दिया जायगा। फिर कुछ गपशप हुई, खाना-पीना हुआ। ऐसे ही करते-कराते रात हो गई। दीना के लिए उन्होंने खूब आराम का परों का बिस्तर लगा दिया और वे लोग रातभर के लिए विदा हो गये। कह गये कि पौ फटने से पहले ही वे आ जायंगे ताकि सूरज निकलने से पहले-पहले मुकाम पर पहुँच जाया जाय।

: ७ :

दीना अपने परों के बिस्तरे पर लेटा तो रहा, पर उसे नींद न आई। रह-रहकर वह जमीन के बारे में सोचने लगता था——

"चलकर मैं कितनी जमीन नाप डालूंगा, कुछ ठिकाना है! एक दिन में पैंतीस मील तो आसानी से कर ही लूंगा। दिन आजकल लंबे होते हैं और पैंतीस मील!——कितनी जमीन उसमें आ जायगी! उसमें से घटिया वाली तो बेच दूंगा या किराये पर उठा दूंगा। लेकिन जो चुनी हुई उम्दा होगी वहां अपना फार्म बनाऊंगा। दो दर्जन तो बैल फिलहाल

काफी होंगे। दो आदमी भी रखने होंगे। कोई डेढ़ सौ एकड़ में तो काश्त करूंगा। बाकी चराई के लिए।"

दीना रातभर पड़ा जमीन-आसमान के कुलाबे मिलाता रहा। देर-रात कहीं थोड़ी नींद आई। आँख झपी होगी कि एक सपना दिखाई दिया।····वह उसी डेरे में है····कि किसीके बाहर से खिलखिलाकर हँसने की आवाज उसके कानों में आई। अचरज हुआ कि यह कौन हो सकता है ? उठकर बाहर आकर देखा कि कोल लोगों का वह सरदार ही बाहर बैठा ठटठा दे-देकर हँस रहा है। हँसी के मारे अपना पेट पकड़ लेता है। पास जाकर दीना ने पूछा, "आप ऐसा हँस क्यों रहे हैं ?" लेकिन अभी पूछ पाया नहीं था कि देखता क्या है कि वहाँ सरदार तो है नहीं, बल्कि वह सौदागर बैठा है जो अभी कुछ दिन पहले उसे अपने देश में मिला था और जिसने इस जमीन की बात बताई थी। तब दीना उससे पूछने को हुआ कि यहां तुम कैसे हो और कब आये ? लेकिन देखा तो वह सौदागर भी नहीं, बल्कि वह पुराना किसान है जिसने मुद्दत हुई तब सतलज-पार की जमीन का पता दिया था। लेकिन फिर जो देखता है तो वह किसान भी नहीं है, बल्कि खुद शैतान है, जिसके खुर हैं और सींग हैं। वही वहां बैठा ठट्ठा मारकर हँस रहा है। सामने

उसके एक आदमी पड़ा हुआ है—नंगे पैर, बदन पर बस एक कुर्त्ता-धोती। जमीन पर वह आदमी औंधे मुंह बेहाल पड़ा है। दीना ने सपने में ही ध्यान से देखा कि ऐसे पड़ा हुआ आदमी वह कौन है और कैसा है ? देखता क्या है कि वह आदमी दूसरा कोई नहीं, खुद दीना ही है और उसकी जान निकल चुकी है। यह देख मारे डर के वह घबरा गया। इतने में उसकी आँख खुल गई।

उठकर सोचा कि सपने में आदमी जाने क्या-क्या वाहियात बातें देख जाता है। अंह् ! यह सोचकर मुंह मोड़ दरवाजे के बाहर झांककर जो देखा तो सवेरा होनेवाला था। सोचा, समय हो गया। उन्हें अब जगा देना चाहिए। चलने में देर ठीक नहीं।

वह खड़ा हो गया और गाड़ी में सोते हुए अपने आदमी को जगाया। कहा कि गाड़ी तैयार करो। खुद कोल लोगों को बुलाने चल दिया।

जाकर कहा, "सवेरा हो गया है। जमीन नापने चल पड़ना चाहिए।" कोल लोग सब उठे और इकट्ठे हुए। सरदार भी आ गये। चलने से पहले उन्होंने चाय की तैयारी की और दीना को चाय के लिए पूछा। लेकिन चाय में देर होने का खयाल कर उसने कहा, "अगर जाना है तो हमको चल देना चाहिए।

वक्त बहुत हो गया ।"

: ८ :

कोल तैयार हुए और सब चल पड़े। कुछ घोड़े पर, कुछ गाड़ी में । दीना नौकर के साथ अपनी छोटी बहली में सवार था। फावड़ा उसने साथ रख लिया था। खुले मैदान में जब पहुँचे, तड़का फूट ही रहा था। पास एक ऊँची टेकड़ी थी, पार खुला बिछा मैदान । टेकड़ी पर पहुँचकर गाड़ी-घोड़ों से सब उतर आये और एक जगह जमा हुए । सरदार ने फिर आगे जाने कितनी दूर तक फैले मैदान की तरफ हाथ उठाकर दीना से कहा कि देखते हो ? यह सब, आँख जाती है वहांतक, हम लोगों की जमीन है । उसमें जो तुम चाहो ले लो ।

दीना की आँखें चमक उठी। धरती एकदम अछूती पड़ी थी। बस हथेली की तरह हमवार और मुलायम। काली ऐसी कि बिनौला । और जहां कहीं जरा निचान था, वहां छाती-छाती जितनी तरह-तरह की हरियाली छाई थी ।

सरदार ने अपने सिर की रुंएदार टोपी उतारी और धरती पर रख दी । कहा, "यह निशान रहा । यहाँ से चलो और यहीं आ जाओ । जितनी जमीन चल लोगे वही तुम्हारी ।"

दीना ने भी रुपये निकाले और टोपी पर गिनकर रख दिये। फिर उसने पहना हुआ अपना कोट उतार



यहाँ से वहाँ तक उम्दा जमीन देखकर दीना की आँखें चमक उठीं

डाला और धोती को कस लिया। अंगोछे में रोटी रक्खी, आस्तीनें चढ़ाईं, पानी का बन्दोबस्त किया, आदमी से फावड़ा लिया, और चलने को तैयार खड़ा हो गया। कुछ क्षण सोचता रह गया कि किस तरफ को चलना बेहतर होगा। सभी तरफ का लालच होता था।

उसने तय किया कि आगे देखा जायगा। पहले तो सामने सूरज की तरफ ही चला चलूँ। एक बार पूरब की ओर मुँह करके खड़ा हो गया, अंगड़ाई लेकर

बदन की सुस्ती हटाई और धरती के किनारे सूरज के मुँह चमकाने का इंतजार करने लगा।

सोचने लगा कि मुझे वक्त नहीं खोना चाहिए और ठंड-ठंड में रास्ता अच्छा पार हो सकता है। सूरज की पहली किरन का उनकी ओर आना था कि दीना, कंधे पर फावड़ा संभाल, खुले मैदान में कदम बढ़ाकर चल दिया।

शुरू में वह धीमे चला, न तेज। हजार-एक गज चलने पर वह ठहरा। वहां एक गड्ढ़ा किया और घास ऊँची चिन दी कि आसानी से दीख सके। फिर आगे बढ़ा। उसके बदन में फुर्ती आ गई। उसने चाल तेज कर दी। कुछ देर बाद दूसरा गड्ढ़ा खोदा।

अब पीछे मुड़कर देखा। सूरज की धूप में टेकड़ी साफ दीखती थी। उसपर आदमी खड़े थे और गाड़ी के पहियों के अरे तक चमकते दीखते थे। कोई अंदाज तीन मील तो वह आ गया होगा। धूप में ताप आता जाता था। कुर्ते पर से वास्कट उतारकर उसने कंधे पर डाल ली और फिर चल पड़ा। अब खासी गर्मी होने लगी। उसने सूरज की तरफ देखा। वक्त हो गया था कि कुछ खाने-पीने की भी सोची जाती।

"एक पहर तो बीत गया। लेकिन दिन में चार पहर होते हैं। अंह्, अभी क्या लौटना ! अभी जल्दी

है। लेकिन जूते उतार डालूं।" यह सोच उसने जूते उतारकर धोती में खोंस लिये और बढ़ चला। अब चलना आसान था।

सोचा, "अभी तीन-एक मील तो और भी चला चलूं। तब दूसरी दिशा लूंगा। कैसी उमदा जगह है। इसे हाथ से जाने देना हिमाकत है। लेकिन क्या अजब बात है कि जितना आगे बढ़ो उतनी जमीन एक-से-एक बढ़कर मिलती है।

कुछ देर वह सीधा बढ़ा चला। फिर पीछे मुड़-कर देखा तो टेकड़ी मुश्किल से दीख पड़ती थी और उसपर के आदमी रेंगती चींटी-से मालूम होते थे और वहां धूप में जाने क्या कुछ चलता हुआ-सा दीख पड़ता था।

दीना ने सोचा, "ओह, मैं इधर काफी बढ़ आया हूं। अब लौटना चाहिए।" पसीना बेहद आ रहा था और प्यास भी लग आई थी।

यहाँ ठहरकर उसने गड्ढा किया, ऊपर घास का ढेर चिन दिया। उसके बाद पानी पीकर सीधी बांई तरफ मुड़ गया। चला चलता गया, चला चलता गया। घास ऊँची थी और गरमी बढ़ रही थी। वह थकने लगा। उसने सूरज की तरफ देखा। सिर पर दोपहरी हो आई थी।

सोचा, अब जरा आराम ले लेना चाहिए। वह बैठ गया। रोटी निकालकर खाई और कुछ पानी पिया। लेटा नहीं कि कहीं नींद न आ जाय। इस तरह कुछ देर बैठ फिर आगे बढ़ चला।

पहले तो चलना आसान हुआ। खाने से उसमें दम आ गया था। लेकिन गरमी तीखी हो चली और आँखों में उसके ऊंघ-सी आने लगी। तो भी वह चलता ही चला गया। सोचा कि तकलीफ घड़ी-दो-घड़ी की है, आराम जिंदगी भर का हो जायगा।

इस तरह भी उसने काफी लम्बी राह नापी। वह



मुड़ने वाला था कि आगे बहुत उपजाऊ जमीन दिखाई दी

बाईं तरफ मुड़ने वाला ही था कि आगे जमीन उपजाऊ

दिखाई दी। उसने सोचा कि इस टुकड़े को छोड़ना तो मूर्खता होगी। यहां सनी की बाड़ी ऐसी उगेगी कि क्या कहना ! यह सोच उसने उस टुकड़े को भी नाप डाला और पार आकर गड्ढे का निशान बना दिया। फिर दूसरी तरफ मुड़ा। जो टेकड़ी की तरफ देखा तो ताप के मारे हवा कांपती-सी मालूम हुई। उस कंपकंपी के धुंधकारे में से वह टेकड़ी की जगह मुश्किल से चीन्ह पड़ती थी।

दीना ने सोचा कि क्षेत्र की ये दो भुजाएं मैंने ज्यादा नाप डाली हैं। अब इधर कुछ कम ही रहने दूं। वह तेज कदमों से तीसरी तरफ बढ़ा। उसने सूरज को देखा। सूरज कोई दो-तिहाई अपना चक्कर काट चुका था और दीना अपने रकबे की तीसरी दिशा में दो मील मुश्किल से तय कर पाया था। मुकाम से अभी वह दस मील दूर था। उसने सोचा कि छोड़ो जाने भी दो। मेरी जमीन की एक बाजू छोटी रह जायगी तो छोटी सही। लेकिन अब सीधी लकीर में मुझे वापस चले चलना चाहिए। जो ऐसे कहीं दूर निकल गया तो बाजी गई। अरे, इतनी ही जमीन क्या थोड़ी है ?

यह सोच दीना ने वहां तीसरे गड्ढे का निशान डाल दिया और टेकड़ी की तरफ मुंह कर ठीक उसी सीध में चल दिया।

: ६ :

नाक की सीध बांधकर वह टेकड़ी की तरफ चला। लेकिन अब चलते मुश्किल होती थी। धूप उसका सत ले चुकी थी। नंगे पैर जगह-जगह कट और छिल गये थे और टांगें जवाब दे रही थीं। जरा आराम करने का उसका जी हुआ, लेकिन यह कैसे हो सकता था? सूरज छिपने से पहले उसे पहुँच जाना था और सूरज किसीकी बाट देखता बैठा नहीं रहता। वह पल-पल नीचे ढल रहा था।

उसके मन में सोच होने लगा कि यह मुझसे बड़ी भूल हुई। मैंने इतने पैर पसारे क्यों? अगर कहीं वक्त तक न पहुँचा तो?

उसने फिर टेकड़ी की तरफ देखा, फिर सूरज की तरफ। मुकाम से अभी वह दूर था और सूरज धरती के पास झुक रहा था।

दीना जी तोड़ चलने लगा। चलने में सांस फूलती और कठिनाई होती थी; लेकिन तेज-पर-तेज कदम वह रखता गया। बढ़ा चला, लेकिन जगह अब भी दूर बनी थी। यह देख उसने भागना शुरू किया। कंधे से वास्कट फेंक दी, जूते दूर हटाए, टोपी अलग की, बस साथ में टेकन के तौर पर वह हल्का फावड़ा रहने दिया।

रह-रहकर सोच होता कि मैं क्या करूँ? मैंने

बिसात से बाहर चीज हथियानी चाही। उसमें बना काम बिगड़ा जा रहा है। अब सूरज छिपने से पहले मैं वहां कैसे पहुँचूंगा ?

इस सोच और डर में वह और हांफने लगा। वह पसीना-पसीना हो रहा था, धोती गीली होकर चिपकी जा रही थी और मुँह सूख गया था। लेकिन फिर भी वह भागता ही जाता था। छाती उसकी लुहार की धौंकनी की तरह चल उठी, दिल भीतर हथौड़े की चोट-सा धड़कने लगा। उधर टांगें बेबस हुई जा रही थीं। दीना को डर हुआ कि इस थकान के मारे कहीं गिरकर ढेर ही न हो जाय।

हाल यह था, पर रुक वह नहीं सका। इतना भाग कर भी अगर मैं अब रुकूँगा तो वे सब लोग मुझपर हँसेंगे और बेवकूफ बनायंगे, इसलिए उसने दौड़ना न छोड़ा, दौड़े ही गया। आगे कोल लोगों की आवाज सुन पड़ती थी। वे उसको जोर-जोर से कहकर बुला रहे थे। इन आवाजों पर उसका दिल और सुलग उठा। अपनी आखिरी ताकत समेट वह दौड़ा।

सूरज धरती से लगा जा रहा था। तिरछी रोशनी के कारण वह खूब बड़ा और लहू-सा लाल दीख रहा था। वह अब डूबा, अब डूबा। सूरज बहुत नीचे पहुँच गया था। लेकिन दीना भी जगह के बिल्कुल किनारे

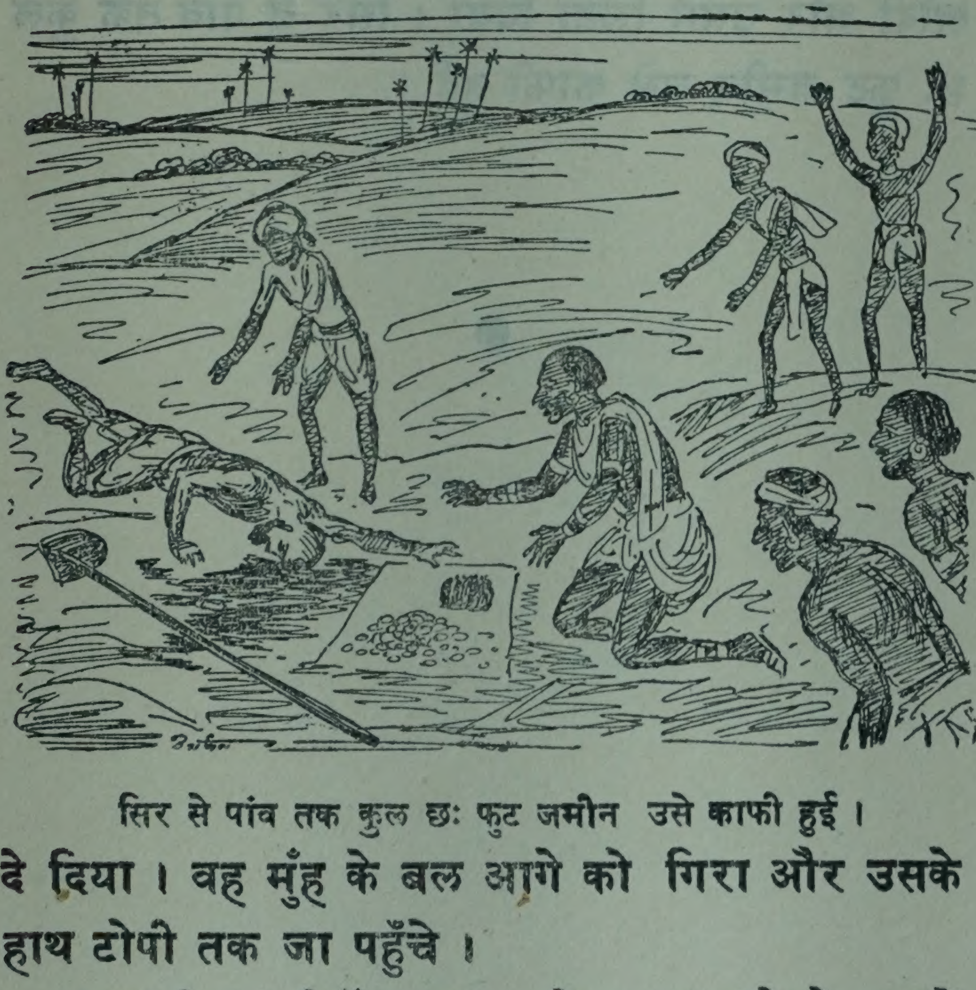
आ लगा था। टेकड़ी पर हाथ हिला-हिलाकर बढ़ावा देते हुए कोल लोग उसे सामने दिखाई देते थे। अब तो जमीन पर रक्खी वह टोपी भी दीखने लगी, जिस-पर उसकी रकम भी रक्खी थी। वहीं बैठा सरदार भी दिखाई दिया—वह पेट पकड़े हँस रहा था।

दीना को अपने सपने की याद हो आई।

उसने सोचा कि हाय, जमीन तो काफी नाप डाली है, लेकिन क्या ईश्वर मुझे उसको भोगने के लिए बचने देगा ? मेरी जान तो गई दीखती है। मैं मुकाम तक अब नहीं पहुँच सकूंगा।

दीना ने हसरत-भरी निगाह से सूरज की तरफ देखा। सूरज धरती को छू चुका था। कुछ हिस्सा डूब भी चुका था। वह बची-खुची अपनी शक्ति से आगे बढ़ा। कमर झुकाकर भागा, जैसे कि टांगें साथ न देती हों। टेकड़ी पर पहुँचते-पहुँचते अंधेरा हो आया था। उसने ऊपर देखा—सूरज छिप चुका था। उसके मुंह से एक चीख-सी निकल गई। "ओह, मेरी सारी मेहनत व्यर्थ गई !"—यह सोचकर वह थमने को हुआ, लेकिन उसे सुन पड़ा कि कोल लोग अब भी उसे पुकार रहे हैं। उसे सहसा याद आया कि वे लोग ऊँचाई पर खड़े हैं और उन्हें सूरज अब भी दीख रहा होगा। सूरज छिपा नहीं है, अगर्चे मुझको नहीं दीखता। यह सोच

कर उसने लंबी सांस खींची और टेकड़ी पर आँख मूंद-कर दौड़ा। चोटी पर अभी धूप थी। पास पहुंचा और सामने टोपी देखी। बराबर सरदार बैठा वहीं पेट पकड़े हँस रहा था। दीना को फिर अपना सपना याद आया और उसके मुँह से चीख निकल पड़ी। टांगों ने जवाब



सिर से पांव तक कुल छः फुट जमीन उसे काफी हुई।

दे दिया। वह मुँह के बल आगे को गिरा और उसके हाथ टोपी तक जा पहुँचे।

"खूब ! खूब !" सरदार ने कहा, "देखो, उसने कितनी जमीन ले डाली !"

दीना का नौकर दौड़ा आया और उसने मालिक

को उठाना चाहा। लेकिन देखता क्या है कि मालिक के मुंह से खून निकल रहा है।

दीना मर चुका था। कोल लोग दया से और व्यंग से हँसने लगे।

नौकर ने फावड़ा लिया और दीना के लिए कब्र खोदी और उसमें लिटा दिया। सिर से पांव तक कुल छः फुट जमीन उसे काफी हुई।

समाज-विकास-माला की पुस्तकें

१. बद्रीनाथ
२. जंगल की सैर
३. भीष्म पितामह
४. शिवि और दधीचि
५. विनोबा और भूदान
६. कबीर के बोल
७. गांधीजी का विद्यार्थी जीवन
८. गंगाजी
९. गौतम बुद्ध
१०. निषाद और शबरी
११. गांव सुखी हम सुखी
१२. कितनी जमीन ?
१३. ऐसे थे सरदार
१४. चैतन्य महाप्रभु
१५. कहावतों की कहानियाँ
१६. सरल व्यायाम
१७. द्वारका
१८. बापू की बातें
१९. बाहुबली और नेमिनाथ
२०. तन्दुरुस्ती हजार नियामत
२१. बीमारी कैसे दूर करें ?
२२. माटी की मूरत जागी
२३. गिरिधर की कुंडलियाँ
२४. रहीम के दोहे
२५. गीता-प्रवेशिका
२६. तुलसी-मानस-मोती
२७. दादू की वाणी
२८. नजीर की नज्में
२९. संत तुकाराम
३०. हजरत उमर
३१. बाजीप्रभु देशपांडे
३२. तिरुवल्लुवर
३३. कस्तूरबा गांधी
३४. शहद की खेती
३५. कावेरी
३६. तीर्थराज प्रयाग
३७. तेल की कहानी
३८. हम सुखी कैसे रहें ?
३९. गो सेवा क्यों ?
४०. कैलास मानसरोवर
४१. अच्छा किया या बुरा
४२. नरसी महेता
४३. पंढरपुर
४४. ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती

मूल्य प्रत्येक का छः आना

सस्ता साहित्य मण्डल

छः आना